भारत में खगोलशास्त्र

बी.वी. सुब्बारायप्पा

भारत में खगोलशास्त्रीय क्रियाकलाप मानव-आत्मा-ब्रह्माण्ड के एकीकरण के आम भारतीय लोकाचार से प्रेरित रहे हैं। इस नज़रिए के दो प्रमुख पहलू हैं। पहला यह कि आत्मा अमर है जबकि मानव शरीर नश्वर है जो ब्रह्माण्ड के साथ सामंजस्य बनाने का सतत प्रयास करता है। इस सामंजस्य का अंतिम लक्ष्य उसी में विलीन हो जाना है। दूसरा है चक्र की अवधारणा। प्रथम पहलू का सम्बंध हर उस चीज़ के प्रति 'स्व' के रवैये से है जो 'स्व' नहीं है। अर्थात यह मनुष्य और प्रकृति के आध्यात्मिक एकीकरण का द्योतक है। जहां तक आकाश में होने वाली चक्रीय घटनाओं का ताल्लुक है, दूसरा पक्ष कहीं ज़्यादा महत्व रखता है।

ये आकाशीय घटनाक्रम मनुष्य के सामाजिक-धार्मिक जीवन में भी प्रतिबिम्बित होते हैं। दिन भर में सूरज की बदलती स्थिति, चांद की घटती-बढ़ती कलाएं, नियमित रूप से ग्रहों का दिखाई देना और छिपना, रात-दिन, ऋतुएं और जन्म-मरण आदि सभी निश्चित रूप से एक चक्राकार घटनाक्रम के द्योतक थे जो धीरे-धीरे सामाजिक, धार्मिक ताने-बाने में गूंथ दिए गए। इसके अलावा आकाशीय चक्र व आकाश मण्डल में बारम्बार दोहराई जाने वाली घटनाएं विभिन्न कर्मकाण्डों के मुहुर्त पता करने में भी काम आती थीं।

खगोलशास्त्र की प्रमुख गतिविधि थी राशि चक्र में सूर्य, चांद और ग्रहों की गति के आधार पर कालगणना और पंचांग सम्बंधी गणनाएं करना। शायद इसीलिए भारतीय खगोलशास्त्र में आकाशीय पिण्डों की उत्पत्ति, संरचना व प्रकृति आदि को ज़्यादा महत्व नहीं दिया गया। और न ही राशि चक्र के बाहर के तारों के मानचित्रण का कोई प्रयास हुआ। दूसरे शब्दों में, भारतीय खगोलशास्त्र के उद्देश्य काफी सीमित थे, किन्तु इस सीमित ताने-बाने में भी इसने कुछ महत्वपूर्ण कदम आगे बढ़ाए थे।

वैदिक खगोलशास्त्र

भारत में खगोलशास्त्र की उत्पत्ति के प्रमाण वैदिक काल (1500 ईसा पूर्व) से ही मिलते हैं। वैदिक साहित्य में अध्ययन का एक प्रमुख विषय ज्योतिष था। पहले ज्योतिष का अर्थ खगोल से ही था किन्तु आगे चलकर इसमें फलित ज्योतिष का भी समावेश हो गया। प्राचीनतम वैदिक खगोलशास्त्रीय ग्रंथ का शीर्षक *वेदांग ज्योतिष* है। आकाशीय पिण्डों, खासकर सूर्य व चंद्र की गतियों तथा ग्रहण व संक्रान्ति के समय का सटीक ज्ञान लोगों के सामाजिक-धार्मिक अनुष्ठानों, त्यौहारों, विवाह, कृषि कार्यों आदि के शुभ-अशुभ समय का पता लगाने के हिसाब से ज़रूरी था। शायद लोगों के आध्यात्मिक लक्ष्य यानी ब्रह्माण्ड, उसके सौन्दर्य व सामंजस्य के साथ एकीकरण इसी पर टिका हुआ था।

आकाशीय प्रकाश पिण्डों में सूर्य को सर्वाधिक महत्वपूर्ण माना जाता था। इसका क्रान्ति पथ बहुत मेहनत व लगन से निर्धारित किया गया था और इसे अलंघ्य माना जाता था। क्रान्ति पथ पर सूर्य की विभिन्न स्थितियों के साथ सम्बद्ध कई रीति-रिवाज थे। ज़ाहिर है, प्रकाश पिण्डों में दूसरा स्थान चन्द्रमा का था। खास तौर से काल गणना की दृष्टि से इसका बहुत महत्व था। दरअसल संस्कृत में चांद को मासकृत कहा जाने का अर्थ ही यह है कि वह मास (महीने) का निर्माता है। गौरतलब है कि अंग्रेज़ी शब्द 'मन्थ' मूनेथ से बना है। अर्थात महीने का सम्बंध चांद से है। उर्दू में भी माह का मतलब चांद ही होता है। महीने की गणना के दो तरीके थे - एक अमावस्या पर समाप्त होता था और दूसरा पूर्णिमा पर।

चांद का पथ 27 या 28 नक्षत्रों (देखें तालिका) के सापेक्ष देखा जाता था। चांद का राशि चक्र भलीभांति ज्ञात था। गौरतलब है कि चीन (नक्षत्र-हसीड) और अरब (मनाज़िल) में भी यही प्रथा प्रचलित थी। यह कहना मुश्किल है कि इन अलग-अलग सभ्यताओं में यह प्रणाली स्वतंत्र रूप से विकसित हुई या कि इसमें परस्पर लेन-देन रहा था। महीने का नाम उस नक्षत्र से निर्धारित होता था जिसमें पूर्णिमा का चांद दिखाई देता था। बारह चांद मासों को 2-2 महीनों की छह ऋतुओं में बांटा गया था। और सौर मासों के अलग नाम भी प्रचलित थे।

विभिन्न वैदिक पंचांग निम्नानुसार थे : नाक्षत्र चांद